नईदुनिया

संपादकीय

नौटंकी के शोर में दब गया नीट का मुद्दा

लोकतंत्र में विरोध जरूरी है, लेकिन जब विरोध मुद्दे से अधिक प्रदर्शन बन जाए तो न लोकतंत्र मजबूत होता है और न ही जनता का हित सधता है। आज राजनीति की सबसे बड़ी विडंबना यही है कि समस्या से ज्यादा उसका मंचन दिखाई देता है। नीट और शिक्षा व्यवस्था में सुधार की मांग को लेकर शुरू हुआ आंदोलन अब राजनीतिक प्रतिस्पर्धा का रूप लेता दिख रहा है। इस पूरी प्रक्रिया में मूल मुद्दा कहीं पीछे छूट गया है।

जंतर-मंतर पर कई दिनों तक परीक्षा प्रणाली में सुधार, पेपर लीक रोकने और शिक्षा माफिया पर कार्रवाई की मांग को लेकर आंदोलन चलता रहा। इस आंदोलन को सोनम वांगचुक के अनशन से राष्ट्रीय पहचान मिली और कई राजनीतिक दलों ने भी समर्थन दिया। सरकार ने शुरुआत में दूरी बनाई, लेकिन बाद में बातचीत के संकेत दिए और संसद में इस विषय पर चर्चा की संभावना भी बनी। इससे उम्मीद जगी कि छात्रों की चिंताओं पर गंभीर विचार होगा।

इसी बीच विपक्ष ने प्रधानमंत्री आवास के बाहर धरना शुरू कर दिया। सरकार की ओर से चर्चा के लिए सहमति जताए जाने के बावजूद प्रदर्शन जारी रहा। इसके बाद राजनीतिक बयान, पुलिस कार्रवाई और उससे जुड़े दृश्य मीडिया की सुर्खियां बन गए। परिणाम यह हुआ कि शिक्षा व्यवस्था में सुधार, परीक्षा की पारदर्शिता और लाखों छात्रों के भविष्य जैसे मूल प्रश्न पीछे छूट गए, जबकि राजनीतिक घटनाक्रम चर्चा का केंद्र बन गया।

यदि उद्देश्य वास्तव में शिक्षा सुधार है, तो उसके लिए ठोस मॉडल और व्यवहारिक सुझाव भी सामने आने चाहिए। जिन राज्यों में संबंधित दलों की सरकारें हैं, वहां पारदर्शी परीक्षा प्रणाली, समयबद्ध भर्ती और जवाबदेह व्यवस्था का उदाहरण प्रस्तुत किया जा सकता है। केवल विरोध से व्यवस्था नहीं बदलती, उसके लिए नीतिगत सुधार और प्रशासनिक इच्छाशक्ति भी जरूरी होती है।

नीट परीक्षा को लेकर छात्रों की नाराजगी स्वाभाविक है। पेपर लीक जैसी घटनाओं ने लाखों विद्यार्थियों का भरोसा कमजोर किया है। दोबारा परीक्षा और प्रवेश प्रक्रिया आगे बढ़ चुकी है, लेकिन परीक्षा प्रणाली में व्यापक सुधार की जरूरत अब भी बनी हुई है। परीक्षा एजेंसियों को तकनीकी रूप से मजबूत करना, डेटा सुरक्षा बढ़ाना, प्रश्नपत्रों की गोपनीयता सुनिश्चित करना और दोषियों पर त्वरित कार्रवाई करना समय की मांग है।

विपक्ष की भूमिका केवल विरोध तक सीमित नहीं होनी चाहिए। उसे रचनात्मक सुझाव देने और समाधान प्रस्तुत करने की जिम्मेदारी भी निभानी होगी। दूसरी ओर सरकार को भी यह समझना होगा कि युवाओं की चिंताओं को केवल राजनीतिक विवाद मानकर टाला नहीं जा सकता। शिक्षा जैसे संवेदनशील विषय पर संवाद, विशेषज्ञों की सलाह और संस्थागत सुधार ही स्थायी समाधान दे सकते हैं।

आंदोलन लोकतंत्र की स्वाभाविक अभिव्यक्ति हैं, लेकिन उनका उद्देश्य समस्या का समाधान होना चाहिए, न कि केवल राजनीतिक संदेश देना। नीट का मुद्दा लाखों छात्रों के भविष्य से जुड़ा है। इसे राजनीतिक प्रतिस्पर्धा का मंच बनाने के बजाय शिक्षा व्यवस्था को अधिक निष्पक्ष, पारदर्शी और विश्वसनीय बनाने पर ध्यान देना समय की सबसे बड़ी आवश्यकता है। लोकतंत्र की असली जीत कैमरों के सामने होने वाले प्रदर्शन में नहीं, बल्कि उन फैसलों में है जो छात्रों का भविष्य सुरक्षित करें। तभी राजनीति अपनी जिम्मेदारी निभाएगी और लोकतंत्र का उद्देश्य भी सार्थक होगा।

शहरों की जेब से चल रही भारत की अर्थव्यवस्था

76 फीसदी खर्च और 60 फीसदी युवा बना रहे नया भारत

भारत अब तेजी से बदल रहा है। देश की अर्थव्यवस्था में शहरों की भूमिका पहले से कहीं अधिक मजबूत हो चुकी है और इस बदलाव की सबसे बड़ी ताकत युवा बनकर उभरे हैं। ताजा रिपोर्ट के अनुसार देश की कुल खपत का 76 प्रतिशत हिस्सा शहरी भारत से आता है, जबकि इस खर्च का लगभग 60 प्रतिशत हिस्सा 35 वर्ष से कम आयु के युवाओं द्वारा किया जा रहा है। इसका अर्थ यह है कि देश की आर्थिक गतिविधियों का केंद्र अब केवल महानगर नहीं रहे, बल्कि टियर-2 और टियर-3 शहर भी तेजी से विकास की धुरी बनते जा रहे हैं।

'अर्बन भारत: इंडियाज कंजम्पशन स्टोरी' नामक रिपोर्ट में 100 से अधिक उपभोक्ता व्यवहार पैटर्न का अध्ययन किया गया है। रिपोर्ट बताती है कि पहले जहां मुंबई, दिल्ली और बेंगलुरु जैसे महानगरों को खपत का मुख्य केंद्र माना जाता था, वहीं अब भोपाल, इंदौर, लखनऊ, जयपुर, कोयंबटूर और नागपुर जैसे शहर भी तेजी से आगे बढ़ रहे हैं। टियर-2 और टियर-3 शहरों में उपभोक्ता खर्च की वृद्धि सबसे अधिक दर्ज की गई है। यह संकेत है कि छोटे शहरों की आर्थिक क्षमता लगातार मजबूत हो रही है और उनकी उपभोक्ता शक्ति तेजी से बढ़ रही है।

इस बदलाव की सबसे बड़ी वजह युवा आबादी है। आज का युवा डिजिटल दुनिया के साथ बड़ा हुआ है। वह जानकारी के लिए इंटरनेट पर निर्भर है, खरीदारी ई-कॉमर्स प्लेटफॉर्म से करता है और सोशल मीडिया से प्रभावित होकर अपनी पसंद तय करता है। उसकी जरूरतें केवल भोजन, कपड़े और आवास तक सीमित नहीं हैं। वह बेहतर जीवनशैली, अनुभव, सुविधा और ब्रांडेड उत्पादों पर भी खर्च कर रहा है। रिपोर्ट के अनुसार रिटेल, टेलीकॉम, ज्वेलरी, शिक्षा, ई-कॉमर्स, रियल एस्टेट और पर्सनल फाइनेंस सहित अनेक क्षेत्रों में सबसे अधिक खर्च इसी आयु वर्ग के लोग कर रहे हैं। आज का बाजार युवाओं की पसंद से संचालित हो रहा है और भविष्य की दिशा भी वही तय करेंगे।

आंकड़ों के अनुसार वर्ष 2019 में भारत का रिटेल बाजार लगभग 10.6 प्रतिशत की दर से बढ़ रहा था, जो 2024 तक बढ़कर 14.2 प्रतिशत हो गया। अनुमान है कि वर्ष 2030 तक भारतीय रिटेल बाजार 137 लाख करोड़ रुपये तक पहुंच सकता है। इसमें ऑनलाइन रिटेल की हिस्सेदारी भी लगातार बढ़ रही है। इसका सीधा अर्थ यह है कि पारंपरिक बाजार के साथ-साथ डिजिटल बाजार भी तेजी से विस्तार कर रहा है और मोबाइल फोन अब सबसे बड़ा शॉपिंग प्लेटफॉर्म बन चुका है।

इस शहरी बदलाव के पीछे तीन प्रमुख कारण हैं। पहला, तेजी से बढ़ता शहरीकरण। रोजगार, शिक्षा और बेहतर जीवन की तलाश में लोग गांवों से शहरों की ओर आ रहे हैं। दूसरा, बढ़ती आय। मध्यम वर्ग का विस्तार हुआ है और उसकी क्रय शक्ति पहले से अधिक मजबूत हुई है। तीसरा, तकनीक का विस्तार। सस्ते इंटरनेट और स्मार्टफोन ने देश के हर हिस्से को बाजार से जोड़ दिया है। आज छोटे शहर का युवा भी वही उत्पाद खरीदना चाहता है जो महानगरों में लोकप्रिय हैं। यही कारण है कि बड़ी कंपनियां अब छोटे शहरों में अपने कारोबार का विस्तार कर रही हैं और स्थानीय भाषा तथा स्थानीय बाजार की जरूरतों के अनुसार अपनी रणनीति बना रही हैं।

रिपोर्ट का एक महत्वपूर्ण निष्कर्ष यह भी है कि अब उपभोग केवल जरूरत तक सीमित नहीं रहा। पहले लोग आय का बड़ा हिस्सा बचत में लगाते थे, लेकिन अब खर्च करने की प्रवृत्ति बढ़ी है। यात्रा, फिटनेस, ऑनलाइन शिक्षा, ब्रांडेड कपड़े, गैजेट्स और मनोरंजन जैसी श्रेणियों पर युवाओं का खर्च लगातार बढ़ रहा है। इससे प्रीमियम और लक्जरी उत्पादों की मांग में भी तेजी आई है।

हालांकि इस बढ़ती खपत के साथ कुछ गंभीर चुनौतियां भी सामने हैं। पहली चुनौती आर्थिक असमानता की है। शहर तेजी से आगे बढ़ रहे हैं, जबकि ग्रामीण क्षेत्रों की प्रगति अपेक्षाकृत धीमी है। यदि यह अंतर बढ़ता गया तो विकास का संतुलन बिगड़ सकता है। दूसरी चुनौती बढ़ते उपभोक्ता कर्ज की है। आसान ईएमआई और क्रेडिट कार्ड के कारण युवा अधिक खर्च कर रहे हैं। यदि आय और खर्च के बीच संतुलन नहीं रहा, तो भविष्य में वित्तीय दबाव बढ़ सकता है। तीसरी चुनौती पर्यावरण की है। बढ़ती खपत के साथ कचरा, ई-वेस्ट और प्रदूषण भी बढ़ रहा है, इसलिए टिकाऊ उपभोग की संस्कृति विकसित करना समय की आवश्यकता है।

सरकार और उद्योग जगत, दोनों के लिए यह रिपोर्ट एक स्पष्ट संकेत है। कंपनियों को अब केवल महानगरों पर निर्भर रहने के बजाय छोटे शहरों की जरूरतों और संभावनाओं को समझना होगा। वहीं सरकार को इन शहरों में आधारभूत ढांचे, कौशल विकास और डिजिटल कनेक्टिविटी पर निवेश बढ़ाना होगा, ताकि आर्थिक विकास की यह गति लंबे समय तक बनी रहे।

वर्ष 2030 तक भारत के दुनिया का तीसरा सबसे बड़ा उपभोक्ता बाजार बनने की संभावना व्यक्त की जा रही है। इस लक्ष्य को हासिल करने में सबसे बड़ी भूमिका टियर-2 और टियर-3 शहरों तथा देश की युवा आबादी की होगी। देश की कुल खपत का 76 प्रतिशत शहरों से और उसका 60 प्रतिशत युवाओं से आना केवल एक आंकड़ा नहीं, बल्कि बदलते भारत की नई आर्थिक तस्वीर है, जो भविष्य की दिशा भी तय करेगी।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)

दिया तले अंधेरा, नियम टूटा और खजाना लुटा!

नगर निगमों में फिर बड़े अनुदान बांटने की तैयारी

प्रदेश में प्रशासनिक मनमानी की एक नई मिसाल सामने आई है, जहां राज्य सरकार के स्पष्ट आदेशों के बावजूद नगर निगम ने करोड़ों रुपये अनुदान के रूप में बांट दिए। जुलाई 2021 में शासन ने स्पष्ट निर्देश जारी किए थे कि किसी भी संस्था को अनुदान देने का अधिकार अब केवल राज्य सरकार के पास होगा। इसके बावजूद भोपाल नगर निगम ने सामाजिक, सांस्कृतिक और धार्मिक संस्थाओं के नाम पर करोड़ों रुपये वितरित कर दिए। यह केवल लापरवाही का मामला नहीं, बल्कि अधिकार क्षेत्र से बाहर जाकर लिए गए फैसलों का गंभीर उदाहरण है।

उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार जुलाई 2021 के बाद से भोपाल नगर निगम ने विभिन्न संस्थाओं को करोड़ों रुपये अनुदान के रूप में दिए। वर्ष 2023-24 में 88.69 लाख रुपये, 2024-25 में 1.61 करोड़ रुपये, 2025-26 में 3.37 करोड़ रुपये वितरित किए गए, जबकि 2026-27 के बजट में 4.78 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है। चार वर्षों में यह राशि 10.67 करोड़ रुपये तक पहुंच गई, जबकि शासन के निर्देशों के अनुसार नगर निगम के पास इस मद में अनुदान देने का अधिकार ही नहीं था। ऐसे में सबसे बड़ा प्रश्न यही है कि प्रतिबंध के बावजूद फाइलें कैसे चलीं, किसने स्वीकृति दी और भुगतान किस आधार पर हुआ।

नगर निगम की ओर से यह तर्क दिया गया कि सामाजिक और धार्मिक गतिविधियों को जारी रखने के लिए यह निर्णय लिया गया। दूसरी ओर जनप्रतिनिधियों का कहना है कि जनभावनाओं को देखते हुए सहायता देना आवश्यक था। लेकिन जनभावना के नाम पर कानून की अनदेखी नहीं की जा सकती। यदि शासन ने स्पष्ट रूप से अधिकार वापस ले लिया था, तो फिर नगर निगम ने किस नियम के तहत करोड़ों रुपये का वितरण किया, इसका उत्तर अब तक सामने नहीं आया है।

इस पूरे मामले में सबसे गंभीर पहलू जवाबदेही का अभाव है। जिन संस्थाओं को अनुदान दिया गया, उनमें से अनेक के संबंध में गतिविधियों और कार्यों का समुचित रिकॉर्ड उपलब्ध नहीं बताया जा रहा। कई मामलों में उपयोगिता प्रमाण-पत्र और खर्च का सत्यापन भी नहीं हुआ। शासन की गाइडलाइन के अनुसार कार्य पूर्ण होने के बाद निर्धारित प्रक्रिया के तहत राशि जारी की जानी चाहिए थी, लेकिन कई मामलों में पूरी राशि पहले ही जारी कर दी गई। इससे वित्तीय अनुशासन और पारदर्शिता दोनों पर सवाल खड़े होते हैं।

यह मामला केवल भोपाल तक सीमित नहीं बताया जा रहा। जबलपुर, ग्वालियर, इंदौर और सागर जैसे अन्य नगर निगमों से भी इसी प्रकार की शिकायतें सामने आई हैं। भले ही वहां राशि कम रही हो, लेकिन यदि प्रक्रिया एक जैसी अपनाई गई है तो इसकी व्यापक जांच आवश्यक है। यदि अधिकार न होने के बावजूद अनुदान दिए गए हैं, तो यह प्रशासनिक व्यवस्था पर गंभीर प्रश्नचिह्न लगाता है।

इस तरह की अनियमितताओं का सबसे बड़ा नुकसान आम जनता को उठाना पड़ता है। जिन संसाधनों का उपयोग सड़क, पेयजल, स्वच्छता, शिक्षा और स्वास्थ्य जैसी मूलभूत सुविधाओं पर होना चाहिए था, वे दूसरी मदों में खर्च हो गए। जब मीडिया में यह मामला सामने आया और राज्य सरकार ने सख्ती दिखाई, तब कुछ भुगतान रोके गए और फाइलों की समीक्षा शुरू हुई। हालांकि तब तक करोड़ों रुपये वितरित किए जा चुके थे।

इस पूरे घटनाक्रम में प्रशासनिक अधिकारियों की भूमिका भी जांच के दायरे में है। आयुक्त, वित्त अधिकारी और लेखा शाखा से लेकर संबंधित अधिकारियों तक सभी स्तरों पर यह देखा जाना आवश्यक है कि यदि शासन का स्पष्ट आदेश मौजूद था तो भुगतान की प्रक्रिया कैसे पूरी हुई। वहीं जनप्रतिनिधि और अधिकारी एक-दूसरे पर जिम्मेदारी डालते नजर आ रहे हैं, जबकि सबसे बड़ा नुकसान सरकारी खजाने और जनता के विश्वास को हुआ है।

राज्य सरकार ने मामले की जांच के निर्देश दिए हैं, लेकिन केवल जांच पर्याप्त नहीं होगी। यदि नियमों का उल्लंघन हुआ है तो जिम्मेदार अधिकारियों और संबंधित पक्षों की जवाबदेही तय होनी चाहिए। साथ ही यदि किसी स्तर पर वित्तीय अनियमितता सिद्ध होती है तो उसकी वसूली और आवश्यक कानूनी कार्रवाई भी होनी चाहिए। भविष्य में ऐसी घटनाओं की पुनरावृत्ति रोकने के लिए अनुदान वितरण की पूरी प्रक्रिया को ऑनलाइन और पारदर्शी बनाया जाना चाहिए, ताकि जनता भी देख सके कि किस संस्था को कितनी राशि और किस उद्देश्य से दी गई है।

लोकतंत्र में सरकारी धन जनता की अमानत होता है। उसका उपयोग नियमों और पारदर्शिता के साथ होना चाहिए, न कि अधिकार क्षेत्र से बाहर जाकर लिए गए निर्णयों के आधार पर। यदि नियम आम नागरिकों पर समान रूप से लागू होते हैं, तो सार्वजनिक धन के उपयोग में भी वही जवाबदेही सुनिश्चित होनी चाहिए। तभी सुशासन और वित्तीय अनुशासन की अवधारणा सार्थक होगी और जनता का विश्वास कायम रह सकेगा।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)

आजकल

95 हजार छात्र सड़क पर प्रोफेशनल शिक्षा पर संकट

मध्यप्रदेश में प्रतिभाशाली विद्यार्थियों को उच्च शिक्षा के लिए आर्थिक सहारा देने वाली मुख्यमंत्री मेधावी विद्यार्थी योजना आज खुद संकट में नजर आ रही है। जिस योजना को गरीब और मध्यम वर्ग के मेधावी छात्रों के लिए संजीवनी माना गया था, वही अब उनके लिए परेशानी का कारण बनती दिख रही है। वजह साफ है, सरकार ने वादा तो किया, लेकिन समय पर राशि जारी नहीं की। सत्र 2025-26 शुरू हो चुका है, जबकि पिछले वर्ष की फीस सहायता अब तक कॉलेजों तक नहीं पहुंची है। इसका असर प्रदेश के लगभग 95 हजार छात्रों पर पड़ रहा है।

इंजीनियरिंग, मेडिकल, एमबीए और लॉ जैसे व्यावसायिक पाठ्यक्रमों की फीस लाखों रुपये में है। सामान्य किसान, मजदूर या छोटे कर्मचारियों के लिए इतनी बड़ी राशि जुटाना आसान नहीं है। इसी चुनौती को दूर करने के लिए यह योजना बनाई गई थी, ताकि आर्थिक अभाव किसी मेधावी छात्र की पढ़ाई में बाधा न बने। लेकिन अब कॉलेज फीस जमा करने का दबाव बना रहे हैं और सरकारी भुगतान लंबित है। ऐसे में हजारों छात्र पढ़ाई छोड़ने या कर्ज लेने की मजबूरी का सामना कर रहे हैं।

इस स्थिति के पीछे वित्तीय योजना का अभाव, विभागों के बीच समन्वय की कमी और जवाबदेही की कमी प्रमुख कारण हैं। उच्च शिक्षा विभाग, तकनीकी शिक्षा विभाग और कॉलेज अलग-अलग दावे कर रहे हैं, लेकिन सबसे अधिक नुकसान छात्रों को उठाना पड़ रहा है। कई संस्थानों से छात्रों को कक्षाओं में बैठने से रोकने, परीक्षा फार्म नहीं भरने और प्रवेश निरस्त करने जैसी शिकायतें सामने आई हैं।

यह केवल फीस का नहीं, बल्कि सरकार की विश्वसनीयता का भी प्रश्न है। यदि समय पर सहायता नहीं मिलेगी तो योजना पर छात्रों का भरोसा कमजोर होगा और प्रतिभा पलायन बढ़ सकता है। सरकार को तत्काल लंबित राशि जारी कर सीधे कॉलेजों को भुगतान सुनिश्चित करना चाहिए तथा प्रभावी निगरानी व्यवस्था लागू करनी चाहिए। शिक्षा पर होने वाला खर्च बोझ नहीं, बल्कि भविष्य का निवेश है। यदि आज मेधावी छात्रों की पढ़ाई बाधित हुई, तो इसका असर आने वाले वर्षों में प्रदेश के विकास, रोजगार और मानव संसाधन की गुणवत्ता पर भी स्पष्ट दिखाई देगा।

लिथियम बैटरियों का रीसाइक्लिंग, भारत के ऊर्जा भविष्य की कुंजी

भारत ऊर्जा आत्मनिर्भरता और स्वच्छ भविष्य की दिशा में तेजी से आगे बढ़ रहा है। इलेक्ट्रिक वाहन, सौर ऊर्जा और ऊर्जा भंडारण प्रणालियों के बढ़ते उपयोग के साथ लिथियम-आयन बैटरियों की मांग अभूतपूर्व स्तर पर पहुंच गई है। इसके साथ ही एक बड़ी चुनौती भी सामने आई है-उपयोग के बाद बैटरियों का सुरक्षित निपटान और उनमें मौजूद कीमती धातुओं का पुन: उपयोग। लंबे समय तक यह माना जाता था कि लिथियम का रीसाइक्लिंग कठिन है, लेकिन नई तकनीकों ने यह धारणा बदल दी है। आज लिथियम बैटरियां कचरा नहीं, बल्कि भविष्य का खजाना मानी जा रही हैं, क्योंकि इनमें मौजूद लिथियम, कोबाल्ट, निकेल और अन्य धातुओं को निकालकर दोबारा उपयोग में लाया जा सकता है। यह प्रक्रिया न केवल पर्यावरण संरक्षण में सहायक है, बल्कि भारत को विदेशी आयात पर निर्भरता कम करने का अवसर भी देती है।

विश्वभर में लिथियम की मांग लगातार बढ़ रही है, क्योंकि स्मार्टफोन, लैपटॉप, इलेक्ट्रिक वाहन और ऊर्जा भंडारण प्रणालियों में लिथियम-आयन बैटरियां अनिवार्य हो चुकी हैं। भारत में भी इलेक्ट्रिक वाहनों और नवीकरणीय ऊर्जा के क्षेत्र में बड़े पैमाने पर निवेश हो रहा है, जबकि लिथियम का अधिकांश भंडार देश में उपलब्ध नहीं है। ऐसे में आयात पर निर्भरता बढ़ती है और विदेशी मुद्रा का बड़ा व्यय होता है। यदि उपयोग की जा चुकी बैटरियों से लिथियम और अन्य धातुओं को पुन: प्राप्त किया जाए तो नई बैटरियों के निर्माण में उनका उपयोग संभव होगा और आयात का बोझ कम किया जा सकेगा।

लिथियम बैटरियों के रीसाइक्लिंग की प्रक्रिया जटिल अवश्य है, लेकिन अब पूरी तरह संभव हो चुकी है। पहले इसे खर्चीला और कठिन माना जाता था, इसलिए अधिकांश बैटरियां कचरे में फेंक दी जाती थीं। अब आधुनिक रासायनिक प्रक्रियाओं के माध्यम से लिथियम, कोबाल्ट और निकेल जैसी धातुओं को अलग कर शुद्ध किया जा रहा है और फिर बैटरी निर्माण में दोबारा उपयोग किया जा रहा है। इस प्रक्रिया को 'अर्बन माइनिंग' भी कहा जाता है, क्योंकि इसमें कचरे से बहुमूल्य धातुओं का निष्कर्षण किया जाता है। भारत में कई स्टार्टअप और बड़ी कंपनियां इस क्षेत्र में काम कर रही हैं और सरकार भी इसे बढ़ावा दे रही है।

रीसाइक्लिंग का सबसे बड़ा लाभ पर्यावरण संरक्षण है। यदि पुरानी बैटरियों को खुले में फेंक दिया जाए तो उनमें मौजूद रसायन मिट्टी और जल स्रोतों को प्रदूषित कर सकते हैं। लिथियम के अलावा कोबाल्ट, निकेल और मैंगनीज जैसे तत्व भी पर्यावरण के लिए हानिकारक हैं। रीसाइक्लिंग से न केवल प्रदूषण कम होगा, बल्कि नई धातुओं के खनन की आवश्यकता भी घटेगी। खनन महंगा होने के साथ-साथ पर्यावरण को भी नुकसान पहुंचाता है, इसलिए रीसाइक्लिंग अधिक टिकाऊ विकल्प है।

भारत के लिए इसका आर्थिक महत्व भी कम नहीं है। आने वाले वर्षों में देश में बड़ी संख्या में इलेक्ट्रिक वाहन होंगे और उनकी बैटरियों का जीवन सामान्यत: पांच से सात वर्ष होता है। इसके बाद बड़ी मात्रा में बैटरियां रीसाइक्लिंग के लिए उपलब्ध होंगी। यदि इनका वैज्ञानिक तरीके से पुनर्चक्रण किया जाए तो अरबों रुपये मूल्य की धातुएं प्राप्त की जा सकती हैं। इससे नया उद्योग विकसित होगा, रोजगार बढ़ेंगे और विदेशी मुद्रा की बचत होगी। यह आत्मनिर्भर भारत की दिशा में भी महत्वपूर्ण कदम साबित होगा।

सरकार ने भी इस दिशा में पहल की है। बैटरी अपशिष्ट प्रबंधन नियमों के तहत निर्माताओं और आयातकों को उपयोग के बाद बैटरियां वापस लेने और उनके सुरक्षित निपटान की जिम्मेदारी दी गई है। इलेक्ट्रिक वाहन नीति में भी रीसाइक्लिंग को प्राथमिकता मिली है तथा अनुसंधान एवं विकास को प्रोत्साहन दिया जा रहा है। हालांकि, अभी भी उपभोक्ताओं में जागरूकता की कमी, अनौपचारिक क्षेत्र में असुरक्षित तरीके से बैटरियां तोड़ने की प्रवृत्ति और आधुनिक रीसाइक्लिंग संयंत्रों की सीमित संख्या जैसी चुनौतियां मौजूद हैं। इनसे निपटने के लिए सरकार और निजी क्षेत्र को मिलकर काम करना होगा। यदि भारत लिथियम बैटरी रीसाइक्लिंग के क्षेत्र में अग्रणी बनता है तो वह अपनी ऊर्जा जरूरतों को अधिक सुरक्षित बनाने के साथ वैश्विक स्तर पर भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है। यह एक ऐसी गोलाकार अर्थव्यवस्था की दिशा में कदम होगा, जहां कचरा भी मूल्यवान संसाधन बन जाएगा। इसके लिए शिक्षा, उद्योग और नीति-तीनों स्तरों पर समन्वित प्रयास जरूरी हैं। लिथियम बैटरियों का रीसाइक्लिंग केवल पर्यावरणीय आवश्यकता नहीं, बल्कि आर्थिक और रणनीतिक जरूरत भी है। समय की मांग है कि इसे राष्ट्रीय प्राथमिकता बनाया जाए, ताकि ऊर्जा आत्मनिर्भरता, प्रदूषण नियंत्रण और रोजगार सृजन के साथ आने वाली पीढ़ियों के लिए स्वच्छ और समृद्ध भारत का निर्माण सुनिश्चित किया जा सके।

(नईदुनिया संपादकीय डेस्क)